International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

महात्मा गाँधी का मानवतावादी चिन्तन

Dr. Deepak Sharma

SCRS Government College, Sawai Madhopur, Rajasthan, India

सार

उनके जीवन के आधार-रूप में 'सत्य' और 'अहिंसा' पूर्ण आस्था के साथ विद्यमान हैं। वे 'सत्य' को ईश्वर का पर्याय मानते थे और उसकी सिद्धि के लिये वे एक मात्र उपाय 'अहिंसा' को ही स्वीकार करते थे। उनके आशय से अहिंसा का स्वरूप ऐसा व्यवहार, जिसमें हिंसा का सहारा न लिया जाये, मन, वचन, कर्म आदि सभी पर लागू होना चाहिए।

परिचय

'मैंने खोजा अपनी आत्मा को

उसे मैं नहीं देख पाया

मैंने खोजा अपने परमेश्वर को

ओझल रहावह भी मेरी दृष्टि से

मैंने खोजा अपने भाई को

और मैंने पा लिये ये तीनों -

आत्मा, परमेश्वर और भाई।'1

यदि कविता अनुभूति और भावनाओं का सहजोद्रेक है तो बाबा आमटे की लिखी इन पंक्तियों को किसी समर्पित समाजसेवी की प्रामाणिक अनुभूति मानने में हमें कोई आशंका नहीं होनी चाहिए, जिसमें वे साफ़-साफ़ कहते हैं कि आत्मा की खोज और परमेश्वर की सिद्धि का मार्ग मनुष्य की सेवा के ज़रिये ही खुलता है। मानवीय संवेदना की प्रसार-परिधि जितनी व्यापक होगी, आत्मा और परमेश्वर की खोज का मार्ग उतना ही प्रशस्त होगा।

मनुष्य और मानव अभिधान के साथ 'ता' प्रत्यय का लगना व्यक्ति मन की आकस्मिक और अनजानी चेष्टा का परिणाम नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति-चेतना का सायास प्रतिफल है, जिसकी अभिव्यक्ति चिन्तन और भाषा के स्तर पर हुई और तदनुरूप वह मनुष्य की कर्म-चेष्टा में दिखायी पड़ने लगी या व्यक्ति की सकारात्मक कर्म-चेष्टा को रूपायित करने के लिए 'मानवता' शब्द अस्तित्व में आया, कहना मुश्किल है; किन्तु यह कहा जा सकता है कि यह संज्ञा भी उन असंख्य रचना-विधानों में से एक है, जो मनुष्य के संस्कारित मन का साक्ष्य देती है और इस बात की पुष्टि करती है कि मनुष्य प्रकृति में जन्म लेता है और चेतना-सम्पन्न होने के कारण विकृति की पाशविक गुफ़ा में न जाकर संस्कृति-निर्माण की चेष्टा में लगा रहता है।[1,2,3]

यदि मेरे इस कथन से जातीय चेतना की अहम्मन्यता ध्वनित न हो तो मैं विनम्रत इस तथ्य को रेखांकित करना चाहता हूँ कि गाँधी को जो धरा-धाम जन्मत प्राप्त हुआ था, उसकी चिन्तन-धारा की केन्द्रा्य परिधि में न सिर्फ़ मनुष्य है, बल्कि मनुष्य के रूप में जन्म लेने के अभिप्राय की पहचान और उसके संभाव्य उत्कर्ष को लेकर गहरी और सूक्ष्म चिन्ता व्यक्त मिलती है। यहाँ तक कि मृत्यु के बाद अदृश्य मोक्ष - जिसे मनुष्य की एक चित्त-वृत्ति दिल के बहलाने का अच्छा खयाल2 मात्र मानती रही है - और जन्म जन्मांतरवाद के विश्वास के कारण सद्कार्य की कसौटी ही मनुष्य-जीवन की सार्थकता रही है। इसलिए यह अकारण नहीं है कि मनुष्य के रूप में जन्म लेने को विधि का एक श्रेष्ठ उपहार - न मानुषात श्रेष्ठतरं हि किंचित - मानकर उसकी जीवन-प्रणाली के मानक तय किये गये हैं और

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

उससे श्रेष्ठतम किये जाने की अपेक्षा व्यक्त की गयी है। कहना न होगा, जीवन-प्रणाली के मानक कमोवेश मानवतावाद के ही उपादान हैं।

गाँधी ईश्वरवादी थे। उनको उसकी परम सत्ता पर अगाध विश्वास था; इस सीमा तक कि 'भगवान की इच्छा के बिना घास का एक तिनका तक नहीं हिल सकता।' और तो और, वे राष्ट्र और समाज-जीवन में आनेवाली आपत्तियों को मनुष्यों की दुर्बलता या उनके दुष्कर्मों का परिणाम मानते थे। बुद्धिवाद की कसौटी पर गाँधी की इस तरह की मान्यताएँ उन्हें रूढिवादी कहलाने के लिए पर्याप्त हैं, किन्तु ग़ौर करने की बात यह है कि यह मान्यता उन्हें न तो अकर्मण्य बनाती है और न ही निश्चेष्ट, बल्कि इसका मूर्त प्रतिफल वे आत्मशुद्धि की प्रेरणा के रूप में पाते हैं। वे कहते हैं -

'मैं समझता हूँ कि जिस तरह ग्रहों की गति नियम के अनुसार होती है, उसी प्रकार ये विपत्तियाँ भी नियमबद्ध हुआ करती हैं। पर इन नियमों का हमें ज्ञान न होने के कारण हम उन्हें आकस्मिक समझते हैं - इस विपत्ति के कारण मैं अधिक विनम्र बनता हूँ। इस आपत्ति को दूर करने के लिए मुझे प्रेरणा मिलती है। आत्म-शुद्धि करने की आवश्यकता का मैं विशेष रूप से अनुभव करने लगता हूँ। मैं भगवान के अधिक निकट पहुँच जाता हूँ। मेरा तर्क शायद ग़लत भी हो सकता है, पर उसका परिणाम ऐसा ही होता है। तर्क से जब आत्म-शुद्धि की इच्छा नहीं होती तो उसे धर्मभीरुता कहा जाता है।'3

इस प्रकार अदृश्य ही सही, पर उस परम सत्ता का विश्वासी यदि आत्म-शुद्धि की प्रेरणा नहीं पाता तो वह धर्मभीरु है और ऐसी धर्मभीरुता न तो व्यक्ति, न समाज और न ही विश्व-कल्याण के काम आ सकती है। गाँधी ईश्वर को जैसे अपने हृदय में प्रतिष्ठित कर उसे साक्षी बनाकर प्रत्येक निर्णय लेते थे, ठीक उसी प्रकार वे लोगों के हृदयों में उस ईश्वर को प्रतिष्ठापित देखना चाहते थे, ताकि उसके अन्दर नैतिक भाव का जागरण हो।[5,7,8]

गाँधी का ईश्वर इस अर्थ में अदृश्य, अमूर्त और निर्गुण न था, जो अलौकिक शक्ति के सहारे चमत्कार करता हो और समाज के ताप का हरण कर लेता हो। वे अपने आराध्य राम-कृष्ण के मानव अवतारी रूप के ही भक्त थे, जो करुणा, संवेदना, सत्यनिष्ठा, त्याग, तप, न्याय-आग्रही और समाज-हित के लिए संघर्षशील आदि आचारों के पुंजीभूत रूप थे। उनके इष्ट के इस रूप को समझे बग़ैर उनके आस्तिक मन को नहीं समझा जा सकता, जो उनके मानवतावाद का आधारभूत अवयव है। हमें इस तथ्य को भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि गाँधी उन्हीं अर्थों में ईश्वरवादी थे, जहाँ तक वे अपने उदात्त कार्यों से मनुष्य-जीवन के उत्कर्ष की प्रेरणा बन सके, इसीलिए एक ओर जहाँ उनका ईश्वर सत्य का रूप है, वहीं उनके जीवन के मध्याह्न तक सत्य ही ईश्वर का पर्याय बन जाता है। वास्तव में यह उनके सार्वभौम मानववाद की दिशा है। कवीन्द्र रवीन्द्र के घनिष्ठ सहयोगी और शान्ति निकेतन में शिक्षक रहे, गाँधी के जीवनीकार श्री कृष्ण कृपलानी इसका सटीक विश्लेषण करते हैं। वे लिखते हैं -

'जब उन्होंने पाया कि ईश्वर को सत्य कहना असुविधाजनक है तो उन्होंने चुपके से उस सूत्र को उलट दिया और कहा कि सत्य ईश्वर है। इसका कोई नास्तिक भी विरोध नहीं कर सकता। गाँधीजी के व्यक्तित्व की यह प्रमुख विशेषता थी कि वह सही अर्थों में रचनात्मक होने के कारण निरंतर विकासमान था, नये पहलू सामने लाता रहता था और नये आयाम ग्रहण करता रहता था। वे कभी अपने पिंजरे के क़ैदी नहीं बने।'4

मानव-हित जिसके चिन्तन का केन्द्रीय सूत्र हो, वह अपने पिंजरे का क़ैदी हो भी नहीं सकता। जीवन और समाज की विकासमान प्रक्रिया और बहुविध समस्याओं के नये आयामों के साक्षात्कार के चलते आधारभूत चिन्तन का विकासमान, उदार और संवादी होना आवश्यक है। किन्तु इस प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जीवन के निर्माण-काल की मानसिक तैयारी। गाँधी के मानस-निर्माण में उनकी माँ का सात्त्विक तपपूत व्यक्तित्व, घर का वैष्णव परिवेश और लंदन-प्रवास के शिक्षण-काल में एडविन आर्नल्ड कृत भगवद्गीता का अंग्रेज़ी अनुवाद, बुद्ध के जीवन-चरित पर इसी लेखक की लिखी द लाइफ़ आफ़ एशिया, कार्लाइल की रचना हीरोज़ एण्ड हीरो वर्शिप में पैगंबर इस्लाम और एक ईसाई मित्र से प्राप्त बाइबिल और हेनरी साल्ट द्वारा लिखित ए प्ली फ़ार वेजिटेरियनिज़्म की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। यहाँ इस बात का संकेत करना ज़रूरी है कि उनके लिए जीवन-दृष्टि के निर्माणकर्ता ये दार्शनिक, धार्मिक ग्रन्थ जितने महत्त्वपूर्ण थे, उतनी ही महत्त्वपूर्ण थी जीवन के स्थूल आचार को निर्दिष्ट करनेवाली शाकाहार की पक्षधर पुस्तक । वास्तव में गाँधी की मानवतावादी दृष्टि में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि सिद्धान्त और व्यवहार की जैसी एकरसता दिखायी देती है, उतने ही छोटे या बड़े समझे जानेवाले विषयों पर एक-सी चिन्ता, एक-सा महत्त्व।[9,10,11]

मानव-कल्याण के लिए व्यक्ति के चिन्तन और व्यवहार की उच्चतम क्रियाएँ जहाँ संस्कृति-निर्माण की दिशा में एक क़दम हैं, वहीं उनके सकारात्मक व्यवहार के छोटे-से-छोटे कार्यों में भी मानवतावाद की झलक देखी जा सकती है। तानाशाह और मित्र-राष्ट्रों के बीच चल रहे महायुद्ध में भारत की भूमिका पर मित्रों से गंभीर मंत्रणा के बीच से उठकर गाँधी का बछड़े की परिचर्या में लग जाना इसी तथ्य का प्रमाण है। मानवता की प्रवृत्ति के स्तरभेद नहीं किये जा सकते हैं। उसे पारिवारिक, प्रान्तीय और राष्ट्रीय खण्डों में नहीं बाँटा जा सकता, वह मानव-मन की अखण्ड और अविभाज्य सत्ता है; इसलिए मेरे इस आलेख के शीर्षक में मानवतावाद के पूर्व 'विश्व' शब्द का संयोजन निरर्थक-सा है, किन्तु गाँधी की चेतना के वैश्विक धरातल पर ज़ोर देने के लिए ही यहाँ विश्वमानवता पद का प्रयोग किया गया है।

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

व्यक्ति की पारदर्शिता मानवतावादी होने की अनिवार्य शर्त चाहे न हो, पर वांछनीय तो है ही। पारदर्शिता गाँधी के व्यक्तित्व का सबसे चमकदार पहलू है और इसीलिए उनके कुछ निर्णयों, व्यवहारों में विरोधाभास पा लेना बहुत कठिन नहीं है। दक्षिण अ़फ्रीका के उनके संघर्षकाल में जुलू विद्रोह और बोअर युद्ध के दौरान उनका उपनिवेशी गोरों का समर्थन, सहयोग और कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में चुने गये नेताजी सुभाष बोस का विरोध तथा प्रदेश कांग्रेस प्रतिनिधियों की सरदार पटेल के पक्ष में स्पष्ट राय की उपेक्षा कर नेहरू को स्वतंत्र भारत का नेतृत्व सौंपने की पक्षधरता उनके कुछ ऐसे ही निर्णय हैं। नेताजी के प्रति किया गया उनका व्यवहार तो गाँधीजी के परम श्रद्धालुओं में भी टीस बनकर ज़िन्दा है। चिन्तक और गाँधीवादी प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद ने तो इसे अपने 'आस्था पुरुष' की 'फिसलन'5 कहा है। गाँधी के कुछ और कार्य-व्यवहार भी प्रश्नांकित किये जा सकते हैं; जो अन्तत छोटे बिन्दु के रूप में ही सही, उनके मानवतावादी बड़े फलक में देखे जा सकते हैं। इनमें से कुछ इतिहास के तत्कालीन समकालीन परिप्रेक्ष्य में पुनर्विचार के योग्य हैं और कुछ अन्ततोगत्वा मनुष्य की दुर्बलता के खाते में रखे जायेंगे। अस्तु!

'वैश्विक दुनिया' के युग में मानवतावाद को लेकर यह प्रश्न अधिक प्रासंगिक हो गया है कि व्यक्ति की धार्मिक आस्था, परंपरा-बोध या जातीय चेतना, राष्ट्रभक्ति और निज भाषा-प्रेम क्या मानवतावाद के आड़े आते हैं? गाँधी के मानवतावादी दृष्टिकोण के संदर्भ में तो ये उपकरण अधिक विचारणीय हैं, क्योंकि इन चारों तत्त्वों का उनके व्यक्तित्व में न सिर्फ़ स्पष्ट समावेश है, बल्कि वे इन संस्थानों से घोषित तौर पर ऊर्जा भी ग्रहण करते हैं। गाँधीजी के कुछ कथन यहाँ द्रष्टव्य हैं -

1. 'ईसाई, मुसलमान आदि अनेक धर्मों का मंथन करने के बाद भी मैं हिन्दू धर्म से चिपका रहा हूँ। हिन्दूधर्म पर मेरी श्रद्धा दुर्दम्य है।'[10,11]

2. 'मुझे अपने पूर्वजों के धर्म का ही पालन करना चाहिए। अपने धर्म में यदि मैं कुछ दोष पाता हूँ तो मुझे उन्हें दूर करके उस धर्म की सेवा करनी चाहिए।'

3. 'उपनिषद् हमें सिखाता है कि इस विश्व का अणु-अणु भगवान ने ही बनाया है। इस संसार की छोटी-बड़ी सभी चीज़ें उसी की हैं और प्रत्येक वस्तु उसी को समर्पित की जानी चाहिए।'

4. 'अज्ञात द्रष्टाओं ने जो कुछ बताया है, उसका कुछ भाग चार वेदों के रूप में हमारे सामने है। यह स्वाभाविक ही है कि इन वेदों के हम तक पहुँचते-पहुँचते विभिन्न लोगों ने अपनी-अपनी कल्पना के अनुसार उनमें कई बातें जोड़ दी हैं। वेदों के काफ़ी समय बाद एक महात्मा पैदा हुआ और उसने हमें गीता प्रदान की। गीता तत्त्वज्ञान का महासागर है। गीता में बतायी हुई बातों का पिछले चालीस वर्षों से अनुक्षण पालन करने का प्रयत्न करते रहने के कारण मैं छाती ठोंककर अपने आप को सनातनी कह सकता हूँ।'

गाँधीजी का मानवतावाद (1)

सर्जना के आधार व अनुषंग

गाँधीजी का मानवतावाद (2)

आधारभूत क्षेत्र

1. 'आज भी भारत को छोड़ दुनिया के किसी भी दूसरे स्थान की अपेक्षा मैं लंदन में रहना अधिक पसंद करूँगा।'[7,8,9]

2. 'यह उपमहाद्वीप मेरे लिए एक पवित्र और प्रिय भूमि बन चुका है, जिसका स्थान मेरी मातृभूमि के बाद ही है।'

'हम सुशिक्षित समझे जानेवाले लोगों का, जिन्हें विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा मिली है, जनसाधारण से सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकता।' (ये सभी उद्धरण श्री नाअ राअ अभ्यंकर के ग्रन्थ 'राष्ट्रपिता गाँधी' के विभिन्न पृष्ठों से उद्धृत किये गये हैं।)

विचार-विमर्श

जनसाधारण से जुड़ सकनेवाले सर्वाधिक तेज़ माध्यम को गाँधीजी सर्वोच्च प्राथमिकता देते थे। हिन्दी भाषा उनके लिए ऐसा ही माध्यम थी, जिसके ज़रिये उन्होंने दक्षिण आ़फ्रीका-समेत हिन्दुस्तान में भी स्वतंत्रता का अलख जगाया था। इस सम्बन्ध में प्रखर मनीषी डॉअ राम विलास शर्मा का यह आकलन उल्लेखनीय है -

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

'उन्होंने राष्ट्र की धारणा को एक नयी अन्तर्वस्तु दी। यह अन्तर्वस्तु जातीयता थी। भारत में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। इन भाषाओं के बोलनेवाले लोग जातियों में संगठित हैं। उन्हें अपने प्रदेश पुनर्गठित करके एकताबद्ध करने का पूरा अधिकार है। अपने प्रदेश में वे अपनी भाषा का व्यवहार करें, अंतरप्रादेशिक व्यवहार के लिए वे हिन्दी से काम लें। गाँधीजी ने हिन्दी के लिए जितना काम किया, उतना और सब नेताओं ने नहीं किया।'6

जनवरी सन् 1942 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के अपने व्याख्यान में उन्होंने तेलुगु भाषी छात्रों से जो कहा, ऐसी स्पष्टोक्ति गाँधीजी के ही बस की बात थी -

'मुझे यह जानकर खुशी हुई कि यहाँ आन्ध्र के 250 विद्यार्थी हैं। क्यों न वे सर राधाकृष्णन के पास जायें और उनसे कहें कि यहाँ हमारे लिए एक आन्ध्र विभाग खोल दीजिए और तेलुगु में हमारी सारी पढ़ाई का प्रबन्ध करा दीजिए? और वे अगर मेरी अक्ल से काम करें तब तो उन्हें कहना चाहिए कि हम हिन्दुस्तानी हैं। हमें ऐसी ज़बान में पढ़ाइए, जो सारे हिन्दुस्तान में समझी जा सके। और मेरी ज़बान तो हिन्दी ही हो सकती है।'7

वास्तव में गाँधीजी के लिए हिन्दी का प्रश्न मात्र भाषा का प्रश्न न था। वह उस राष्ट्र की पहचान और राष्ट्रीयता का प्रश्न था। उनका कहना था -

'जिस राष्ट्र ने अपनी भाषा का अनादर किया है, उस राष्ट्र के लोग अपनी राष्ट्रीयता खो बैठते हैं। हममें से अधिकांश लोगों की यही हालत हो गयी है।'8

गाँधी के मानवतावादी दृष्टिकोण को निर्मित और विकसित करने में इस लेख में विनम्रत निर्दिष्ट चारों तत्त्व - हिन्दू धर्म के प्रति निष्ठा, जातीय परंपरा-बोध, भारत भूमि से प्रेम और राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रतिष्ठा और पक्ष में गाँधीजी के विभिन्न कालक्रम और विभिन्न लोगों से किये गये संवादों से ऐसे सैकड़ों ब्यौरे दिये जा सकते हैं, जिन्हें भावगत पुनरावृत्ति की आशंका से यहाँ छोड़ा जा रहा है। इन ब्यौरों में जातीय बोध और परंपरा का गौरव कथन करनेवाले तथा आध्यात्मिक शब्दावली, प्रतीकों, मिथकों आदि से समाहित उदाहरण भी यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं, जो 'गाँधी वाङ्मय' में विपुल मात्रा में उपलब्ध हैं और ये प्रतीक और शब्दावली उनकी आत्माभिव्यक्ति हैं। प्रश्न यह है कि क्या इस स्वदेशीपन के गौरव के साथ मानवतावाद के व्यापक धर्म का पालन किया जा सकता है? क्या ये तत्त्व व्यक्ति को संकीर्ण बनाते हैं? और क्या इसीलिए कुछ ऐसे बौद्धिक9 भी सामने आने लगे हैं, जो इन्हीं कारणों से गाँधीजी की विश्व मानवतावादी दृष्टि पर प्रश्नचिह्न लगाने का साहस करने लगे हैं?

विचारने की बात यह है कि गाँधीजी ने इन उपकरणों का इस्तेमाल किस रूप में किया है। धर्म जब संस्थागत होकर मठ का रूप धारण कर लेता है, तब अक्सर उसके संकीर्ण होने की आशंकाएँ बलवती हो जाती हैं, किन्तु जब वह जीवनचर्या को अनुशासित, संस्कारित करने और आत्मपरीक्षण का दर्पण बन जाता है, तब वह एक गतिशील व्यक्ति, समाज और मनुष्यता के निर्माण में सहायक बनता है। सच कहा जाये तो गाँधीजी के लिए ये चारों तत्त्व राष्ट्रीय चेतना को जगाने और गतिशील नागरिक बनाने के ही साधन थे, ताकि मानवतावाद की ज्योति को प्रज्वलित किया जा सके।

गाँधीजी 'इशोपनिषद्' के जिस मत्र पर लट्टू थे और जिसे हिन्दू धर्म का सार कहते हुए उसकी जैसी व्याख्या वे करते थे, वह उनके मानवतावादी दृष्टिकोण को व्यक्त करने का सूत्र समझा जाना चाहिए - 'इस विश्व में जो कुछ भी गोचर है, उसमें भगवान समाया हुआ है, त्याग करो और उसमें सन्तोष का अनुभव करो, भगवान जो कुछ भी तुम्हें दे, उसका उपभोग करो - उसी में सन्तुष्ट रहो; किसी के धन का अपहरण करने का विचार भी मेरे मन में न आ पाये।'10

'ईशावास्यम् इदम् सर्वम् यत्किंच जगत्यांजगत्।

त्येन त्यक्तेन भुंजीथा: मा गृध कस्यस्विद धनम्।।'[5,7,8]

वास्तव में गाँधीजी के मानवतावाद की व्याप्ति मनुष्य से लेकर प्रकृति और जीवधारियों तक है। मित्र हो या कष्टदाता, गोरा हो या काला, स्त्री हो या पुरुष, बालक हो या वृद्ध, देशी हो या विदेशी, वह किसी भी रंग या जाति-समुदाय का हो, वे सबके लिए अपना हृदय खोल कर रख देते हैं। वे तुलसीदास के भक्तिभाव और समर्पण के कायल थे, इसलिए गोस्वामी तुलसीदास की इन पंक्तियों -

'सीय राम मय सब जग जानी।

करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।'

की भाव-भूमि में उनके मानवतावादी दृष्टिकोण को समझना अधिक न्यायसंगत होगा।

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

गाँधीजी के 'हरिजन' में व्यक्त इन विचारों से रू-ब-रू होने पर उनके मानवतावाद को उसके विभिन्न आयामों में समझने में सीधे मदद मिलती है -

गाँधी का यह कथन और उनका जीवन-भर का व्यवहार इस बात का साक्षी है कि वे एकान्त और अकेले ही मुक्ति के आकांक्षी न थे। हिन्दी कवि मुक्तिबोध ने कहीं लिखा है - 'मुक्ति अकेले नहीं होती। वह होती है सबके साथ ही।' गाँधी ने इस धारणा को चरितार्थ कर दिखाया है। वे मनुष्य में देवत्व के अन्वेषक हैं।

विश्व-समाज में चिन्ता के दो छोर अलग-अलग साफ़ दिखायी पड़ते हैं, जिसमें एक ओर पाप करने और परमसत्ता की कृपा का प्रसाद पाकर मुक्त हो जाने का मार्ग है तो दूसरे में इन्द्रिय-निग्रह की साधना से मन का निरन्तर परिष्कार और आत्मविवेचन कर देवत्व की भूमि में पहुँच पाने का माद्दा है। यह दूसरा मार्ग कठिन और तपपूर्ण अवश्य है, किन्तु परिणाम में देवत्वमय हो जाने का है।

'आत्मा वा अरे ज्ञातव्य' (उपनिषद्) व हमारे चेतना ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता सहित अनेक आर्षग्रन्थों की प्रेरणा से आत्मपरिष्कार की इस साहसिक यात्रा में असंख्य लोग शामिल होते रहते हैं और अन्तर में गोते लगाकर प्राप्य देवत्व रत्न को महावीर और बुद्ध बनकर समाज को बाँटते रहे हैं। बुद्ध के 'अप्प दीपोभव' और आधुनिक युग में श्री अरविन्द के अतिमानव को पाने की चेष्टा में अन्ततोगत्वा समाज-सिद्धि का ही अभिप्राय है।

सामी विवेकानन्द ने अपनी प्रसिद्ध शिकागो वक्तृता में जिस 'एंकोहं बहुस्याम' का चेतना के स्तर पर शंखनाद किया और बाद में उसे व्यवहार के स्तर पर प्रतिष्ठापित किया, वह राजमार्ग विश्वमानवतावाद की ओर ही जाता है, जो गाँधी की कर्म-चेतना में पग-पग पर साकार हुआ है। सारांश कथन यह है कि मानवतावाद आधुनिक बौद्धिक समाज की कोई नव्यतर उपार्जित संज्ञा नहीं है, वरन् इस कल्पवृक्ष की जड़ें 'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' में मौजूद थीं, जो कभी बंगाल की खाड़ी से उठनेवाले चण्डीदास के स्वर - 'नाईं चाई देव, नाईं चाई दानव, चाई मानव, चाई मानव चाई मानव' में तो कभी कबीर के सन्देश में कि 'मोको कहाँ ढूँढ़े बन्दे मैं तो तेरे पास में' गूँजे हैं, जिसे अलग-अलग देश-काल में विरले लोग अपनी अपनी सामर्थ्य-भर पल्लवित - पुष्पित करते आये हैं; गाँधी इस परंपरा की अद्यतन कड़ी और इसे सेनेवाले सर्वाधिक सफल पहरुए बनकर मानवतावाद की इतिहासधारा में आकाशदीप बनकर खड़े हैं।[9,10]

परिणाम

पोरबंदर में शैक्षिक सुविधाएँ अल्पविकसित थीं; मोहनदास जिस प्राथमिक विद्यालय में पढ़ते थे, वहाँ बच्चे अपनी उंगलियों से धूल में वर्णमाला लिखते थे। सौभाग्य से, उनके पिता एक अन्य रियासत राजकोट के दीवान बन गये। हालाँकि मोहनदास ने कभी-कभार स्थानीय स्कूलों में पुरस्कार और छात्रवृत्तियाँ जीतीं, लेकिन उनका रिकॉर्ड औसत दर्जे का था । टर्मिनल रिपोर्टों में से एक ने उन्हें "अंग्रेजी में अच्छा, अंकगणित में अच्छा और भूगोल में कमजोर" का दर्जा दिया; आचरण बहुत अच्छा, ख़राब लिखावट।" उनकी शादी 13 साल की उम्र में हो गई थी और इस तरह स्कूल में उनका एक साल बर्बाद हो गया। एक आशंकितबच्चा, वह न तो कक्षा में और न ही खेल के मैदान पर चमका। जब वह अपने बीमार पिता (जिनकी उसके तुरंत बाद मृत्यु हो गई) की देखभाल नहीं कर रहे थे या घर के कामों में अपनी माँ की मदद नहीं कर रहे थे, तो उन्हें लंबी एकान्त सैर पर जाना पसंद था।

उनके शब्दों में, उन्होंने सीखा था, "बड़ों के आदेशों का पालन करना, न कि उनकी अनदेखी करना।" इतनी चरम निष्क्रियता के साथ, यह आश्चर्य की बात नहीं है कि उसे किशोर विद्रोह के दौर से गुजरना पड़ा, जो गुप्त नास्तिकता , छोटी-मोटी चोरी, गुप्त धूम्रपान और - एक वैष्णव परिवार में पैदा हुए लड़के के लिए सबसे चौंकाने वाला - मांस खाना था। उनकी किशोरावस्था शायद उनकी उम्र और कक्षा के अधिकांश बच्चों की तुलना में अधिक तूफानी नहीं थी। जो बात असाधारण थी वह यह थी कि उसके युवा अपराधों का अंत किस प्रकार हुआ।

प्रत्येक पलायन के बाद "फिर कभी नहीं" उसका खुद से वादा था। और उसने अपना वादा निभाया. एक अस्वाभाविक बाहरी रूप के नीचे, उन्होंने आत्म-सुधार के लिए एक ज्वलंत जुनून छुपाया जिसके कारण उन्होंने हिंदू पौराणिक कथाओं के नायकों को भी अपने साथ ले लिया, जैसे किप्रह्लाद औरहरिश्चंद्र-सच्चाई और त्याग के महान अवतार-जीवित आदर्श के रूप में।

1887 में मोहनदास ने बॉम्बे विश्वविद्यालय (अब मुंबई विश्वविद्यालय) की मैट्रिक परीक्षा पास की और भावनगर (भाऊनगर) के सामलदास कॉलेज में दाखिला लिया । चूँकि उन्हें अचानक अपनी मूल भाषा - गुजराती - से अंग्रेजी में स्विच करना पड़ा, उन्हें व्याख्यानों का पालन करना काफी कठिन लगा।[11]

इस बीच, उनका परिवार उनके भविष्य पर चर्चा कर रहा था। यदि उसे अपने ऊपर छोड़ दिया जाए तो वह डॉक्टर बनना पसंद करता। लेकिन, विविसेक्शन के खिलाफ वैष्णव पूर्वाग्रह के अलावा, यह स्पष्ट था कि, यदि उन्हें गुजरात के किसी एक राज्य में उच्च पद संभालने की पारिवारिक परंपरा को बनाए रखना है, तो उन्हें बैरिस्टर के रूप में अर्हता प्राप्त करनी होगी । इसका मतलब

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

इंग्लैंड की यात्रा थी , और मोहनदास, जो सामलदास कॉलेज में बहुत खुश नहीं थे, ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उनकी युवा कल्पना ने कल्पना कीइंग्लैंड "दार्शनिकों और कवियों की भूमि, सभ्यता का केंद्र" के रूप में। लेकिन इंग्लैंड की यात्रा को साकार करने से पहले कई बाधाओं को पार करना था। उनके पिता ने परिवार के लिए बहुत कम संपत्ति छोड़ी थी; इसके अलावा, उसकी माँ अपने सबसे छोटे बच्चे को दूर देश में अज्ञात प्रलोभनों और खतरों का सामना करने में अनिच्छुक थी। लेकिन मोहनदास ने इंग्लैंड जाने की ठान ली थी। उनके एक भाई ने आवश्यक धन जुटाया, और उनकी मां का संदेह तब दूर हो गया जब उन्होंने शपथ ली कि घर से दूर रहते हुए वह शराब, महिलाओं या मांस को नहीं छूएंगे। मोहनदास ने आखिरी बाधा - मोध बनिया उपजाति (वैश्य) के नेताओं के आदेश की अवहेलना कीजाति), जिससे गांधी परिवार के लोग थे, जिन्होंने हिंदू धर्म का उल्लंघन मानते हुए उनकी इंग्लैंड यात्रा पर रोक लगा दी - और सितंबर 1888 में रवाना हुए। उनके आगमन के दस दिन बाद, वह इसमें शामिल हो गएइनर टेम्पल , लंदन के चार लॉ कॉलेजों (द टेम्पल) में से एक।

गांधीजी शीघ्र ही दक्षिण अफ्रीका में प्रचलित नस्लीय भेदभाव से अवगत हो गये। डरबन की एक अदालत में यूरोपीय मजिस्ट्रेट ने उनसे पगड़ी उतारने को कहा; उन्होंने इनकार कर दिया और अदालत कक्ष से चले गये। कुछ दिनों बाद, प्रिटोरिया की यात्रा के दौरान , उन्हें एक प्रथम श्रेणी के रेलवे डिब्बे से अनादरपूर्वक बाहर फेंक दिया गया और पीटरमैरिट्सबर्ग के रेलवे स्टेशन पर उन्हें कांपते और सोचते हुए छोड़ दिया गया।. उस यात्रा के आगे, उन्हें एक स्टेजकोच के श्वेत चालक द्वारा पीटा गया क्योंकि वह एक यूरोपीय यात्री के लिए जगह बनाने के लिए फ़ुटबोर्ड पर यात्रा नहीं कर रहे थे, और अंततः उन्हें "केवल यूरोपीय लोगों के लिए" आरक्षित होटलों से रोक दिया गया था। ये अपमान नेटाल में भारतीय व्यापारियों और मजदूरों को रोजाना भुगतना पड़ता था, जिन्होंने उन्हें उसी तरह से जेब में डालना सीख लिया था, जिस तरह से वे अपनी मामूली कमाई को जेब में रखते थे। जो नया था वह गांधीजी का अनुभव नहीं बल्कि उनकी प्रतिक्रिया थी। वह अब तक स्पष्ट नहीं हो सका थाआत्म-पुष्टि या आक्रामकता के लिए. लेकिन जब वह अपने ऊपर लगे अपमान से होशियार हो गया तो उसके साथ कुछ घटित हुआ। पीछे मुड़कर देखें तो डरबन से प्रिटोरिया तक की यात्रा उन्हें अपने जीवन के सबसे रचनात्मक अनुभवों में से एक लगी; यह उसकी सच्चाई का क्षण था। अब से वह दक्षिण अफ्रीका में प्राकृतिक या अप्राकृतिक व्यवस्था के हिस्से के रूप में अन्याय को स्वीकार नहीं करेंगे; वह एक भारतीय और एक पुरुष के रूप में अपनी गरिमा की रक्षा करेंगे।

प्रिटोरिया में रहते हुए, गांधी ने उन परिस्थितियों का अध्ययन किया जिनमें दक्षिण अफ्रीका में उनके साथी दक्षिण एशियाई रहते थे और उन्हें उनके अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में शिक्षित करने की कोशिश की, लेकिन उनका दक्षिण अफ्रीका में रहने का कोई इरादा नहीं था। दरअसल, जून 1894 में, जब उनका साल का अनुबंध समाप्त होने वाला था, वह डरबन वापस आ गए थे, और भारत के लिए रवाना होने के लिए तैयार थे। उनके सम्मान में दी गई एक विदाई पार्टी में, उन्होंने नेटाल मर्करी पर नज़र डाली और उन्हें पता चला कि नेटाल विधान सभा भारतीयों को वोट देने के अधिकार से वंचित करने के लिए एक विधेयक पर विचार कर रही थी । गांधी ने अपने मेजबानों से कहा, "यह हमारे ताबूत में पहली कील है।" उन्होंने बिल का विरोध करने में असमर्थता व्यक्त की, और वास्तव में कॉलोनी की राजनीति के बारे में अपनी अज्ञानता व्यक्त की, और उनसे उनकी ओर से लड़ाई लड़ने का आग्रह किया।[9]

18 साल की उम्र तक गांधीजी ने शायद ही कभी कोई अखबार पढ़ा था। न तो इंग्लैंड में एक छात्र के रूप में और न ही भारत में एक उभरते बैरिस्टर के रूप में उन्होंने राजनीति में अधिक रुचि दिखाई थी। दरअसल, जब भी वह किसी सामाजिक सभा में भाषण पढ़ने या अदालत में किसी मुवक्किल का बचाव करने के लिए खड़ा होता था तो वह एक भयानक मंचीय भय से उबर जाता था। फिर भी, जुलाई 1894 में, जब वह मुश्किल से 25 वर्ष के थे, वह लगभग रातों-रात एक कुशल राजनीतिक प्रचारक के रूप में विकसित हो गये। उन्होंने नेटाल विधायिका और ब्रिटिश सरकार के लिए याचिकाएँ तैयार कीं और उन पर अपने सैकड़ों हमवतन लोगों से हस्ताक्षर करवाए। वह विधेयक को पारित होने से नहीं रोक सके लेकिन नेटाल, भारत और इंग्लैंड में जनता और प्रेस का ध्यान नेटाल भारतीयों की शिकायतों की ओर आकर्षित करने में सफल रहे। उन्हें कानून का अभ्यास करने के लिए डरबन में बसने के लिए राजी किया गयाऔर भारतीय समुदाय को संगठित करना ।1894 में उन्होंने की स्थापना कीनेटाल इंडियन कांग्रेस, जिसके वे स्वयं अथक सचिव बने। उस सामान्य राजनीतिक संगठन के माध्यम से, उन्होंने विषम भारतीय समुदाय में एकजुटता की भावना का संचार किया । उन्होंने सरकार, विधायिका और प्रेस को भारतीय शिकायतों के तर्कपूर्ण बयानों से भर दिया। अंत में, उन्होंने बाहरी दुनिया के सामने शाही अलमारी में कंकाल, अफ्रीका में अपने स्वयं के उपनिवेशों में से एक में रानी विक्टोरिया की भारतीय प्रजा के साथ किये जाने वाले भेदभाव को उजागर किया। एक प्रचारक के रूप में यह उनकी सफलता का पैमाना था कि द टाइम्स ऑफ लंदन और द स्टेट्समैन एंड इंग्लिशमैन ऑफ कलकत्ता (अब कोलकाता) जैसे महत्वपूर्ण समाचार पत्र प्रकाशित हुए।) नेटाल भारतीयों की शिकायतों पर संपादकीय टिप्पणी की।

1896 में गांधी अपनी पत्नी कस्तूरबा (या कस्तूरबाई) और अपने दो सबसे बड़े बच्चों को लाने और विदेशों में भारतीयों के लिए समर्थन जुटाने के लिए भारत गए । उन्होंने प्रमुख नेताओं से मुलाकात की और उन्हें देश के प्रमुख शहरों में सार्वजनिक बैठकों को संबोधित करने के लिए राजी किया। दुर्भाग्य से, उनकी गतिविधियों और कथनों के विकृत संस्करण नेटाल तक पहुंच गए और इसकी यूरोपीय आबादी भड़क गई। जनवरी 1897 में डरबन में उतरने पर, उन पर एक श्वेत भीड़ द्वारा हमला किया गया और लगभग उन्हें

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

पीट-पीट कर मार डाला गया।ब्रिटिश कैबिनेट में औपनिवेशिक सचिव जोसेफ चेम्बरलेन ने नटाल सरकार को दोषी लोगों को सजा दिलाने के लिए कहा, लेकिन गांधी ने अपने हमलावरों पर मुकदमा चलाने से इनकार कर दिया। उन्होंने कहा, यह उनका एक सिद्धांत था कि व्यक्तिगत गलती के निवारण के लिए अदालत में नहीं जाना चाहिए ।[10]

निष्कर्ष

जुलाई 1914 में गांधीजी के दक्षिण अफ्रीका से भारत के लिए प्रस्थान करने पर स्मट्स ने एक मित्र को लिखा, "संत हमारे तटों को छोड़कर चले गए हैं," मुझे आशा है कि हमेशा के लिए। एक चौथाई सदी बाद, उन्होंने लिखा कि यह उनका "भाग्य था कि वह एक ऐसे व्यक्ति का विरोधी बनें जिसके लिए तब भी मेरे मन में सर्वोच्च सम्मान था।" एक बार, जेल में अपने सामान्य प्रवास के दौरान, गांधी ने स्मट्स के लिए एक जोड़ी सैंडल तैयार की थी, जिन्होंने याद किया कि उनके बीच कोई नफरत और व्यक्तिगत दुर्भावना नहीं थी, और जब लड़ाई खत्म हो गई तो "वहां ऐसा माहौल था कि सभ्य शांति का निष्कर्ष निकाला जा सकता है।"

जैसा कि बाद की घटनाओं से पता चला, गांधी के कार्य ने दक्षिण अफ्रीका में भारतीय समस्या का कोई स्थायी समाधान नहीं दिया। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के साथ जो किया वह वास्तव में दक्षिण अफ्रीका ने उनके साथ जो किया उससे कम महत्वपूर्ण नहीं था। इसने उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया था, लेकिन, उसे अपनी नस्लीय समस्या के भंवर में खींचकर, उसे आदर्श सेटिंग प्रदान की थी जिसमें उसकी विशिष्ट प्रतिभाएँ खुद को प्रकट कर सकती थीं।[11]
धार्मिक खोज

गांधी की धार्मिक खोज उनके बचपन, उनकी मां के प्रभाव और पोरबंदर तथा राजकोट में उनके घरेलू जीवन से शुरू हुई , लेकिन दक्षिण अफ्रीका में उनके आगमन के बाद इसे काफी प्रोत्साहन मिला। प्रिटोरिया में उनके क्वेकर मित्र उन्हें ईसाई धर्म में परिवर्तित करने में विफल रहे, लेकिन उन्होंने धार्मिक अध्ययन के लिए उनकी भूख को बढ़ा दिया। के लेखन से वे मोहित हो गयेईसाई धर्म पर लियो टॉल्स्टॉय , पढ़ेंअनुवाद में कुरान , और हिंदू धर्मग्रंथों और दर्शन में गहराई से उतरा। तुलनात्मक धर्म का अध्ययन, विद्वानों के साथ बातचीत, और धार्मिक कार्यों को स्वयं पढ़ने से वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सभी धर्म सच्चे थे और फिर भी उनमें से हर एक अपूर्ण था क्योंकि उनकी व्याख्या "कम बुद्धि से, कभी-कभी खराब दिल से की गई थी, और अक्सर ग़लत व्याख्या की जाती है।"

श्रीमद राजचंद्र, एक प्रतिभाशाली युवा जैन दार्शनिक, जो गांधी के आध्यात्मिक गुरु बने, ने उन्हें उनके जन्म के धर्म, हिंदू धर्म की "सूक्ष्मता और गहराई" के बारे में आश्वस्त किया। और यह भगवद्गीता थी, जिसे गांधी ने पहली बार लंदन में पढ़ा था , जो उनका "आध्यात्मिक शब्दकोष" बन गया और जिसने संभवतः उनके जीवन पर सबसे बड़ा प्रभाव डाला। गीता के दो संस्कृत शब्दों ने उन्हें विशेष रूप से आकर्षित किया। एक थाअपरिग्रह ("गैरकब्जा"), जिसका अर्थ है कि लोगों को उन भौतिक वस्तुओं को त्यागना होगा जो आत्मा के जीवन को बाधित करती हैं और धन और संपत्ति के बंधनों को तोड़ देना है । दूसरा थासमभाव ("समानता"), जो लोगों को दर्द या खुशी, जीत या हार से अप्रभावित रहने और सफलता की आशा या विफलता के डर के बिना काम करने का आदेश देता है।

वे केवल पूर्णता के परामर्श नहीं थे। 1893 में जिस दीवानी मामले में उन्हें दक्षिण अफ्रीका ले जाया गया था, उसमें उन्होंने विरोधियों को अदालत के बाहर अपने मतभेद सुलझाने के लिए राजी किया था। एक वकील का असली कार्य उन्हें "बिखरे हुए पक्षों को एकजुट करना" लगता था। उन्होंने जल्द ही अपने ग्राहकों को अपनी सेवाओं के खरीदार के रूप में नहीं बल्कि दोस्तों के रूप में माना; उन्होंने न केवल कानूनी मुद्दों पर बल्कि बच्चे के दूध छुड़ाने या परिवार के बजट को संतुलित करने का सबसे अच्छा तरीका जैसे मुद्दों पर भी उनसे सलाह ली। जब एक सहयोगी ने विरोध किया कि ग्राहक रविवार को भी आते हैं, तो गांधी ने उत्तर दिया: "संकट में फंसे व्यक्ति को रविवार को आराम नहीं मिल सकता।"

गांधी की कानूनी कमाई प्रति वर्ष £5,000 के उच्चतम आंकड़े तक पहुंच गई, लेकिन उन्हें पैसा कमाने में बहुत कम रुचि थी, और उनकी बचत अक्सर उनकी सार्वजनिक गतिविधियों में डूब जाती थी। डरबन में और बाद में जोहान्सबर्ग में, उन्होंने एक खुली मेज रखी; उनका घर युवा सहयोगियों और राजनीतिक सहकर्मियों के लिए एक आभासी छात्रावास था। यह उनकी पत्नी के लिए एक कठिन परीक्षा थी, जिनके असाधारण धैर्य, धीरज और आत्म-त्याग के बिना गांधी शायद ही खुद को सार्वजनिक हितों के लिए समर्पित कर पाते। जैसे-जैसे उन्होंने परिवार और संपत्ति के पारंपरिक बंधनों को तोड़ा, उनका जीवन सामुदायिक जीवन में बदल गया।

गांधीजी को सादगी, शारीरिक श्रम और तपस्या के जीवन के प्रति एक अनूठा आकर्षण महसूस हुआ। 1904 में - जॉन रस्किन को पढ़ने के बादअनटू दिस लास्ट , पूंजीवाद की एक आलोचना - उन्होंने डरबन के पास फीनिक्स में एक फार्म स्थापित किया जहां वह और उनके दोस्त अपने पसीने से जी सकते थे। छह साल बाद जोहान्सबर्ग के पास गांधी की देखरेख में एक और कॉलोनी विकसित हुई; इसका नाम रखा गयारूसी लेखक और नैतिकतावादी के लिए टॉल्स्टॉय फार्म, जिनकी गांधी प्रशंसा करते थे और उनके साथ

ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 4.921| Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 3, Issue 4, July 2016 |

पत्र-व्यवहार करते थे। वे दो बस्तियाँ अधिक प्रसिद्ध बस्तियों की पूर्ववर्ती थींभारत में आश्रम (धार्मिक आश्रय स्थल), अहमदाबाद (अहमदाबाद) के पास साबरमती और वर्धा के पास सेवाग्राम में ।

दक्षिण अफ्रीका ने न केवल गांधी को राजनीतिक कार्रवाई के लिए एक नई तकनीक विकसित करने के लिए प्रेरित किया, बल्कि उन्हें उन बंधनों से मुक्त करके लोगों के नेता में बदल दिया, जो ज्यादातर लोगों को कायर बनाते हैं। [11]

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1. बाबा आमटे : स्वैच्छिक कार्य और गाँधीवादी दृष्टि, सं. ओझा - पृष्ठ 15
2. 'हमको मालूम है जन्नत की हक़ीकत लेकिन दिल के बहलाने को ग़ालिब यह ख़याल अच्छा है।' ग़ालिब
3. राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी : ना. रा. अभ्यंकर, अनुवादक : रा. श. केलकर, पृष्ठ 151
4. गाँधी : एक जीवनी : कृष्ण कृपलानी, अनु. नरेश नदीम, पृष्ठ 120
5. आस्था पुरुष : प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद, पृष्ठ 135
6. गाँधी, आम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएँ, डॉ. रामविलास शर्मा, भूमिका से
7. वही - पृष्ठ 406
8. वही - वही - पृष्ठ 441
9. देखें, जी. डी. सिंह की पुस्तक Gandhi : behind the mask of divinity
10. राष्ट्रपति महात्मा गाँधी : ना. रा. अभ्यंकर, पृष्ठ 182
11. Gandhian Humanism - Mohit Chakrabarti,पृष्ठ 23